राजस्थान उच्च न्यायालय

जोधपुर

एस.बी. दांडिक अपील सं.142/1995

खेमा पुत्र श्री कालिया, जाति आदिवासी, निवासी ग्राम लोहारिया, पीएस लोहारिया, जिला बांसवाड़ा। (वर्तमान में सेंट्रल जेल, उदयपुर में)।

----अपीलार्थी

बनाम

राजस्थान राज्य

----प्रत्यर्थी

.....

अपीलार्थी(ओं) के लिए : श्री मृदुल जैन

प्रत्यर्थी(ओं) के लिए : श्री केएस कुम्पावत, पीपी

.....

माननीय न्यायाधिपति श्रीमान् मनोज कुमार गर्ग

<u>निर्णय</u>

<u>रिपोर्ट-योग्य</u>

<u>12/05/2025</u>

अपीलार्थी द्वारा धारा 374(2) सीआर.पी.सी. के तहत सत्र प्रकरण सं.11/1993 में विद्वान जिला एवं सत्र न्यायाधीश , बांसवाड़ा द्वारा पारित निर्णय दिनांकित 14.02.1995 के विरुद्ध यह दांडिक अपील दायर की गई है , जिसके द्वारा विद्वान न्यायाधीश ने अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया और निम्नानुसार दंडादेश दिया :

अपराध	**दंडादेश**	**जुर्माना और व्यतिक्रम होने पर दंडादेश**
धारा 376 आईपीसी	7 वर्ष का कठोर कारावास	500/- रु. और भुगतान न करने की दशा में 1 माह के कठोर कारावास

		से भुगतना होगा
धारा 447 आईपीसी	---	300/- रु. और भुगतान न करने की दशा में 1 माह के कठोर कारावास से भुगतना होगा

दोनों दंडादेश साथ-साथ चलने का आदेश दिया गया।

मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि परिवादी ने पुलिस थाना लोहारिया में एक रिपोर्ट इस आशय की दर्ज कराई कि अपीलार्थी ने उसके साथ बलात्कार किया है। इस रिपोर्ट पर , पुलिस ने अभियुक्त अपीलार्थी के विरुद्ध धारा 447 और 376 आईपीसी के तहत मामला दर्ज किया और अन्वेषण आरंभ किया।

अन्वेषण पूर्ण होने पर, पुलिस ने अभियुक्त अपीलार्थी के विरुद्ध आईपीसी की धारा 323, 447 और 376 के तहत चालान पेश किया। इसके बाद, अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए, उसने इन आरोपों से इन्कार कर विचारण जारी रखना चाहा।

विचारण के अनुक्रम के दौरान, अभियोजन पक्ष ने कुल 7 गवाहों को परीक्षित करवाया। इसके पश्चात्, सीर.पी.सी. की धारा 313 के अंतर्गत अपीलार्थी के बयान मुलजिम दर्ज किये गए। बचाव पक्ष की ओर से, अपीलार्थी ने किसी भी गवाह से परीक्षा नहीं की।

विचारण के समापन पर, विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 14.02.1995 के निर्णय के तहत अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया और ऊपर वर्णित अनुसार दंडादिष्ट किया।

अपीलार्थी के अधिवक्ता ने दलील दी कि विद्वान विचारण न्यायालय ने आईपीसी की धारा 447 और 376 के तहत अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने में विधि की घोर त्रुटि की है। अधिवक्ता ने तर्क दिया कि अपीलार्थी के विरुद्ध एक झूठा मामला गढ़ा गया है। यह दलील दी

गई कि इस मामले में एफआईआर घटना की तारीख से तीन दिन के विलम्ब के पश्चात् दर्ज की गई थी, और अभियोजन पक्ष इस विलम्ब के लिए संतोषप्रद स्पष्टीकरण देने में विफल रहा है। आगे यह भी तर्क दिया कि अपीलार्थी और अभियोक्त्री के कृषि क्षेत्र अगल -बगल हैं, जिससे वे पड़ोसी बन जाते हैं। इसके अतिरिक्त , यह आरोप लगाया गया है कि अभियोक्त्री का पति , हरदारिया, अपीलार्थी के प्रति शत्रुता रखता है। वास्तव में , यह दावा किया गया है कि हरदारिया और अभियोक्त्री दोनों ने अपीलार्थी पर हमला किया और यह झूठा मामला संस्थित किया गया है। इसके अलावा, अभियोजन पक्ष के गवाहों के बयानों के साथ -साथ प्रथम सूचना रिपोर्ट में भी महत्वपूर्ण विरोधाभास, चूक और सुधार हैं। यह भी अवेक्षा की जाती है कि घटना के दो प्रत्यक्षदर्शियों में से केवल एक , अर्थात् रमेश परीक्षित हुआ था, जबकि अभियोजन पक्ष दूसरे प्रत्यक्षदर्शी, रमन को परीक्षित करवाने में विफल रहा। इसके अतिरिक्त , चिकित्सीय साक्ष्य अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत वृत्तांत को संपुष्ट नहीं करता है। अधिवक्ता दलील देते है कि अभियोक्त्री ने अपीलार्थी को क्षति पहुंचाने के लिए पूरी तरह से एक झूठी कहानी रची है। विद्वान विचारण न्यायालय, दोषसिद्धि का आक्षेपित आदेश पारित करते समय, अभिकथित तौर पर साक्ष्य एवं मामले के अन्य संबंधित पहलुओं का उचित मूल्यांकन करने में विफल रहा , जिससे अपीलार्थी को अपराधों के लिए गलती से दोषसिद्ध किया गया। अतएव , यह तर्क दिया गया कि दोषसिद्ध का निर्णय मौलिक रूप से त्रुटिपूर्ण और अवैध है , जिसे अभिखंडित और अपास्त किया जाना अपेक्षित है। अपीलार्थी को उपर्युक्त अपराधों से दोषमुक्त किया जा सकता है। अपने तर्क को सुदृढ़ करने के लिए, अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के मामले ***बिभिशन बनाम महाराष्ट्र राज्य [2008(1) डब्ल्यूएलसी (एससी) आपराधिक 254]*** और इस न्यायालय के मामले ***सांवलिया बनाम राजस्थान राज्य [2008(2) सीआर.एल.आर.***

(राज.) 1071], महेश चंद शर्मा बनाम राजस्थान राज्य [2009 (2) आर.सीआर.डी. 51 (राज.)] के निर्णय का संदर्भ दिया है।

दूसरी ओर, विद्वान लोक अभियोजक ने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों का विरोध किया और तर्क दिया कि साक्ष्यों पर समुचित विचार के पश्चात , विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को उपर्युक्त अपराधों के लिए सही दोषसिद्ध किया है। यह आक्षेपित निर्णय एक विस्तृत आदेश है और इस न्यायालय से किसी हस्तक्षेप की अपेक्षा नहीं है।

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया और अभियोजन पक्ष के साथ -साथ बचाव पक्ष के साक्ष्यों तथा अभियुक्त -अपीलार्थी की दोषसिद्धि के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा उत्कथित विधि के दृष्टांतों का परिशीलन किया गया।

पीडब्ल्यू-2 रमेश, एक प्रत्यक्षदर्शी, ने अभियोक्त्री और अपीलार्थी के मध्य झगड़े की घटना की संपुष्टि की और बताया कि अपीलार्थी के पैर में चोट लगी थी जिससे खून बह रहा था। पीडब्ल्यू-3, अभियोक्त्री के पति ने भी इस वृत्तांत का समर्थन करते हुए दावा किया कि वह और रमेश घटनास्थल पर बाद में पहुंचे तथा उसने स्वयं ने अपीलार्थी के पैर पर कुल्हाड़ी से चोट पहुंचाई। इन परिसाक्ष्यों से दोनों पक्षों की ओर से हुई तीखी झड़प और शारीरिक हिंसा का संकेत मिलता है।

पीडब्ल्यू-6 चिकित्सा अधिकारी, जिसने अभियोक्त्री की जांच की , ने उसकी पीठ पर आई खरोंचों एवं उसकी शरीर के अन्य हिस्सों पर क्षतियों की उपस्थिति की रिपोर्ट दी। तथापि, चिकित्सीय रिपोर्ट (प्रदर्श-पी/4) से प्रकट हुआ कि उसके वस्त्र पर वीर्य या खून के कोई धब्बे नहीं पाए गए थे। उसका बलात्कार किए जाने के वृत्तांत और चिकित्सीय निष्कर्षों के मध्य

विसंगतियां महत्वपूर्ण रूप से उसकी विश्वसनीयता को जर्जरित करती है , क्योंकि लैंगिक हमले के संबंध में जैविक साक्ष्यों की अनुपस्थिति उसके आरोपों पर संदेह उत्पन्न करती है। इसके अतिरिक्त, अभियोजन एफएसएल (न्यायालयिक प्रयोगशाला) रिपोर्ट पेश करने में विफल रहा, जो लैंगिक हमले के दावे की वैज्ञानिक विधिमान्यता उपलब्ध कर सकती थी। यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि 'यद्यपि एक व्यक्ति झूठ बोल सकता है , किंतु परिस्थितियां नहीं' , और इस मामले में, वैज्ञानिक और चिकित्सीय साक्ष्य को अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य को संपुष्ट करना चाहिए था; उनकी अनुपस्थिति उसके वृत्तांत की सत्यता के संबंध में एक युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न करती है।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत, अपीलार्थी ने स्पष्ट रूप से कथन किया है कि उसके, अभियोक्त्री और उसके पति के मध्य झगड़ा हुआ था। उसने स्वीकार किया कि अभियोक्त्री ने उसे लाठी से मारा और उसके पति ने उसके पैर पर कुल्हाड़ी से क्षति पहुंचाई। उल्लेखनीय है कि प्रत्यक्षदर्शी रमेश और अपीलार्थी की चिकित्सीय रिपोर्ट (प्रदर्श-पी/5) उसके द्वारा बताए गए घटनाक्रम को संपुष्ट करती है। उसके परिसाक्ष्य और चिकित्सीय साक्ष्य के मध्य यह एकरूपता अभियोजन पक्ष के मामले की मजबूती को काफी कम कर देती है , जो मुख्य रूप से अभियोक्त्री के अभियोग पर आधारित है।

साक्ष्यों की समग्रता को देखते हुए , कई कारक अभियोजन पक्ष के मामले पर गंभीर संदेह उत्पन्न करते हैं। अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य में वैज्ञानिक और चिकित्सीय साक्ष्यों का अभाव है तथा उसके वृत्तांत और चिकित्सीय रिपोर्ट के बीच विसंगतियाँ उसकी विश्वसनीयता को क्षीण करती हैं। एफएसएल रिपोर्ट का प्रस्तुत न किया जाना , आगे आरोपों को कमजोर करती है। इसके अतिरिक्त, बिना किसी संतोषप्रद स्पष्टीकरण के तीन दिन के विलम्ब से एफआईआर

दर्ज की गई, जो अक्सर एक मनगढ़ंत या अतिरंजित कहानी का संकेत देती है। अभियोक्त्री के वृत्तांत की अंतर्निहित असंभाव्यता , दोनों पक्षों द्वारा हिंसा की लगातार स्वीकारोक्ति और अपीलार्थी के वृत्तांत का समर्थन करने वाले संपुष्टकारी चिकित्सीय साक्ष्य , इस संभावना की ओर इशारा करते हैं कि मामला झूठा गढ़ा गया है। यह संभव है कि अभियोक्त्री और उसके पति ने व्यक्तिगत बदला लेने या अंतरस्थ हेतु के लिए झूठी शिकायत दर्ज कराई हो। इसलिए , संपूर्ण साक्ष्य और विधिक सिद्धांतों के आलोक में , अपीलार्थी के विरुद्ध मामला निश्चायक रूप से युक्तियुक्त संदेह से परे साबित नहीं हुआ , और साक्ष्य मिथ्या आलिप्त किए जाने की संभावना की ओर इशारा करते हैं। परिणामस्वरूप , संदेह का लाभ अभियुक्त को दिया जाना चाहिए और मामले से दोषमुक्त कर दिया जाना चाहिए।

राधु बनाम मध्य प्रदेश राज्य (2007) 4 क्रि.एल.जे. 4704 में रिपोर्ट किए गए मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने टिप्पणी की है :

> “5. यह अब सर्वमान्य है कि बलात्संग के मामले में दोष का निर्धारण अभियोक्त्री के असंपुष्टकारी साक्ष्य पर आधारित हो सकता है। अपराध की ऐसी प्रकृति प्रत्यक्ष संपुष्टकारी साक्ष्य प्राप्त करना कठिन बना देती है। अभियोक्त्री के साक्ष्य को तुच्छ विसंगतियों और विरोधाभासों के आधार पर खारिज नहीं किया जाना चाहिए। यदि बलात्संग की पीड़िता सशपथ यह कथन करती है कि उसके साथ बलात् मैथुन किया गया था , तो उसका बयान सामान्यतः स्वीकार कर लिया जाएगा , भले ही वह असंपुष्ट हो , जब तक कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह अनुमान लगाने की आवश्यकता न हो कि सहमति थी या पूरी घटना अनधिसंभाव्य या काल्पनिक थी। यदि सहमति हो भी , तो भी यह कृत्य 'बलात्संग' ही माना जाएगा, यदि लड़की की आयु 16 वर्ष से कम है। यह भी सुस्थापित है कि पीड़िता के गुप्तांगों पर चोटों का न होना अपने आप में बलात्संग के मामले को झूठा नहीं ठहराएगा , न ही इसे

सहमति का प्रमाण माना जाएगा। इसी प्रकार, किसी चिकित्सक की यह राय कि किसी मैथुन या बलात्संग का कोई साक्ष्य नहीं था, पीड़िता के बलात्संग के अभियोग पर विश्वास न करने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकता है। पीड़िता के शरीर पर रगड़, छिलना और खरोंचें, विशेषकर उसकी बांह, कलाई, चेहरे, छाती, जांघ और पीठ पर गुत्थमगुत्था होने के निशान लैगिंक हमले के आरोप का समर्थन करते हैं। साथ ही, न्यायालयों को यह भी ध्यान रखना चाहिए कि बलात्संग के झूठे आरोप असामान्य नहीं हैं। ऐसे दुर्लभ उदाहरण भी हैं जहाँ माता - पिता ने बदला लेने, धन उद्दापित करने या आर्थिक देनदारी से बचने के लिए अपनी भोली या आज्ञाकारी बेटी को बलात्संग का झूठा आरोप लगाने के लिए राजी किया हो। बलात्संग हुआ था या नहीं, यह अंततोगत्वा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। "

एआईआर 2021 एससी 1904 में रिपोर्ट हुए **योगेश एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य** के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पाया कि अभियोजन पक्ष का मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्यों और गवाहों के परिसाक्ष्य पर अत्यधिक निर्भर था। न्यायालय ने अपीलार्थियों को अपराध से जोड़ने वाले निश्चायक साक्ष्यों के अभाव की अवेक्षा की , जैसे कि लैंगिक हमले के न्यायालयिक साक्ष्य की अनुपस्थिति और अस्पष्ट परिस्थितियाँ। शरद बिरधीचंद सारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य के परिस्थितिजन्य साक्ष्य के सिद्धांतों का हवाला देते हुए , न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि अभियोजन पक्ष मामले को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने में विफल रहा। सुसंगत पैरा निचे उद्धृत है:-

20) अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य प्रकटन करते है कि तीन गवाहों , जिन्हें प्रत्यक्षदर्शी बताया गया था, में से दो गवाह, अर्थात् पीडब्ल्यू12 राजीव और पीडब्ल्यू15 नीरज पक्षद्रोही घोषित हुए और अभियोजन के मामले का समर्थन नहीं किया। ये दोनों 10 गवाह पीड़िता के निकट संबंधी हैं और अभिलेख पर ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह संकेत मिले कि उन पर कोई

दबाव डाला गया था या उनमें किसी प्रकार का संदेह था। इन दोनों गवाहों ने स्पष्ट रूप से कहा कि पीड़िता का अपहरण करने वाले व्यक्ति न्यायालय के समक्ष अभियुक्त की हैसियत से उपस्थित नहीं थे।

21) इस प्रकार, अब हमारे पास पीडब्ल्यू10 मनोज, जो कि इत्तिला देने वाला और पीड़िता का पिता है, का परिसाक्ष्य बचा है। इस गवाह द्वारा रिपोर्ट दी गई , जिसके आधार पर अपराध दर्ज किया गया था, न तो यह दर्शाती है कि वह घटना का प्रत्यक्षदर्शी था और न ही यह बताती है कि पीड़िता का अपहरण करने वाले अभियुक्त की पहचान घटना के समय किसी भी तरह से ज्ञात थी। गवाह द्वारा प्रतिपरीक्षा में दिए गए बयान से यह भी पता चलता है कि घटना के समय वह घर के अंदर बैठा था और बच्चों और अन्य राहगीरों की चीख -पुकार ने उसका ध्यान खींचा, जिसके बाद गवाह घर से बाहर आया। इन परिस्थितियों में , पीडब्ल्यू10 को घटना का प्रत्यक्षदर्शी मानना बहुत मुश्किल है। हमारे विचार से , उसके बयान पर भरोसा करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियाँ पूरी तरह से गलत थीं। इस प्रकार , वे तीनों गवाह, जिनके बारे में दावा किया गया था कि वे घटना के प्रत्यक्षदर्शी हैं और जिनके परिसाक्ष्य पर अभियोजन पक्ष ने भरोसा किया था, कोई मदद नहीं करते।

22) अब हम अभिलेख पर की अन्य परिस्थितियों पर आते है , ताकि यह देखा जा सके कि क्या अभिलेख पर की परिस्थितियां अपने आप में अभियुक्त की दोषिता को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं।

23) परिस्थितिजन्य साक्ष्य मामलों के संबंध में विधि बहुत स्पष्ट है और जैसा कि इस न्यायालय द्वारा शरद बिरधीचंद सारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य , (1984) 4 एससीसी 116 में अधिकथित है, सुस्थापित सिद्धांत इस प्रकार हैं :-

“153. इस निर्णय का गहन विश्लेषण यह दर्शाएगा कि किसी अभियुक्त के विरुद्ध मामला पूर्णतः स्थापित होने से पूर्व निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिए :

(1) जिन परिस्थितियों से दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है , उन्हें पूरी तरह से स्थापित किया जाना चाहिए। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि इस न्यायालय ने उपदर्शित किया कि संबंधित परिस्थितियाँ "अवश्य या होनी चाहिए" और "स्थापित हो सकती हैं" नहीं। "साबित किया जा सकता है" और "साबित किया जाना चाहिए या होना चाहिए " के बीच न केवल व्याकरणिक बल्कि कानूनी अंतर भी है , जैसा कि इस न्यायालय ने शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य [(1973) 2 एससीसी 793: 1973 एससीसी (आपराधिक) 1033: 1973 क्रि एलजे 1783] में अभिनिर्धारित किया था , जहाँ ये टिप्पणियाँ की गई थीं : [एससीसी पैरा 19, पृष्ठ 807: एससीसी (आपराधिक) पृष्ठ 1047]

"निश्चित रूप से, यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि अभियुक्त को दोषी होना चाहिए , न कि केवल दोषी हो सकता है, इससे पहले कि न्यायालय दोषसिद्ध कर सके और 'हो सकता है' और 'होना चाहिए' के मध्य मानसिक दूरी लंबी है और अस्पष्ट अनुमानों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करती है।"

(2) इस प्रकार स्थापित तथ्य केवल अभियुक्त के अपराध की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए, अर्थात्, उन्हें अभियुक्त के दोषी होने के अलावा किसी अन्य परिकल्पना पर समझाया नहीं जा सकता,

(3) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिए ,

(4) उन्हें सिद्ध की जाने वाली परिकल्पना के सिवाए हर संभावित परिकल्पना को अपवर्जित कर देना चाहिए, और

(5) साक्ष्यों की एक ऐसी श्रृंखला होनी चाहिए जो इतनी पूर्ण हो कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई युक्तियुक्त आधार न छोड़े और यह दर्शाए कि सभी मानवीय संभावनाओं में कृत्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा।"

24) वर्तमान मामले की कुछ मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं :-

(क) यद्यपि शव-परीक्षा रिपोर्ट से प्रकटन होता है कि पीड़िता के साथ यौन उत्पीड़न किया गया था, लेकिन अभिलेख पर उपलब्ध एफएसएल रिपोर्ट मृतक पीड़िता पर यौन उत्पीड़न के साथ अभियुक्त का कोई संबंध स्थापित नहीं करती है।

(ख) पीड़िता का शव खुले मैदान में पड़ा मिला था।

(ग) अभिलेख में यह स्पष्ट नहीं है कि वर्तमान अपीलार्थियों को कब गिरफ्तार किया गया तथा उनके प्रकट बयानों के आधार पर शव की बरामदगी कैसे और किस प्रकार हुई।

25) निश्चित रूप से ऐसी परिस्थितियाँ मौजूद हैं , जैसे कि पीड़ित से संबंधित कपड़ों के साथ - साथ टिफिन बॉक्स आदि की बरामदगी। तथापि , अभिलेख पर किसी अन्य तात्विक साक्ष्य के अभाव में, जो अभियुक्त के अपराध की ओर संकेत करता हो , ऐसी बरामदगियाँ स्वयं में , यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त नहीं मानी जा सकतीं कि मामला युक्तियुक्त संदेह से परे साबित हो गया है। न केवल वे परिस्थितियाँ प्रकृति में निश्चायक नहीं हैं , बल्कि वे एक अकाट्य और सुसंगत श्रृंखला भी नहीं बनाती हैं , जिससे कि अभियुक्तों की दोषिता के अतिरिक्त किसी अन्य परिकल्पना को अपवर्जित किया जा सके।

इसलिए, यह न्यायालय यह विचार व्यक्त करता है कि न्यायपालिका को विवेक और समझदारी से काम लेना चाहिए , विशेष रूप से बलात्संग जैसे गंभीर आरोपों वाले मामलों में , यह मानते हुए कि झूठे अभियोग असामान्य नहीं हैं। ऐसे आरोप बदला लेने , धन के उद्दापन या वित्तीय दायित्वों से बचने की इच्छा जैसे उद्देश्यों से प्रेरित हो सकते हैं। इसलिए , यह अवधारण

कि बलात्संग का कृत्य हुआ है या नहीं , प्रत्येक मामले के लिए विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों की गहन जाँच पर आधारित होना चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य के आलोक में और प्रस्तुत आरोपों की अंतर्निहित असंभाव्यता पर विचार करते हुए , यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए बाध्य है कि अभियोजन पक्ष अपने मामले को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने में विफल रहा है। न्याय और निष्पक्षता के सिद्धांतों के लिए यह आवश्यक है कि दोष स्पष्ट प्रमाणों के साथ स्थापित किया जाए, और ऐसे प्रमाण के अभाव में, संदेह का लाभ अभियुक्त को दिया जाना चाहिए। तदनुसार, अभियुक्त आईपीसी की धारा 376 के तहत आरोपों से दोषमुक्त होने का हकदार है।

तथ्यों, परिस्थितियों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य की व्यापक जांच के आधार पर , इस न्यायालय की सुविचारित राय है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 447 के तहत दोषसिद्धि की अपेक्षा करने के लिए कोई मामला स्थापित नहीं हुआ है , जो आपराधिक अतिचार से संबंधित है। प्रस्तुत साक्ष्य आवश्यक तत्वों को साबित नहीं करते हैं जो यह स्थापित करने के लिए आवश्यक हैं कि अभियुक्त ने आपराधिक आशय से प्रतिवादी की संपत्ति में अवैध रूप से प्रवेश किया या वहां रहा। इसके अतिरिक्त , ये परिस्थितियाँ किसी अपराध को कारित करने या विधिविरुद्ध बेकब्जा करने के किसी आशय को प्रदर्शित नहीं करती हैं। ठोस और पुष्ट सबूतों के अभाव में, निर्दोषिता की उपधारणा अभिभावी होनी चाहिए। परिणामस्वरूप , न्यायालय पाता है कि अभियोजन पक्ष एक युक्तियुक्त संदेह से परे अभियुक्त के अपराध को साबित करने में विफल रहा है। तदनुसार, अभियुक्त धारा 447 आईपीसी के तहत आरोपों से दोषमुक्ति का हकदार है।

परिणामस्वरूप, वर्तमान अपील स्वीकार की जाती है। तदनुसार, सत्र प्रकरण संख्या 11/1993 में विद्वान जिला एवं सत्र न्यायाधीश, बांसवाड़ा द्वारा दिनांक 14.02.1995 को पारित निर्णय में यथा अभिलिखित अपीलार्थी की दोषसिद्धि को अभिखंडित एवं अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी को आईपीसी की धारा 447, 376 के तहत अपराध से दोषमुक्त किया जाता है। अपीलार्थी जमानत पर है; उसे आत्मसमर्पण करने की आवश्यकता नहीं है। तदनुसार, उसके जमानत बंधपत्र निरस्त माने जाते हैं। विद्वान अवर विचारण का अभिलेख तत्काल वापस भेजा जाए।

तथापि, सीआरपीसी की धारा 437-क के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, अभियुक्त अपीलार्थी को निर्देशित किया जाता है कि वह एक माह की अवधि के भीतर विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष 50,000/- रुपये का स्वीय बंधपत्र और इतनी ही राशि का एक प्रतिभूति बंधपत्र तत्काल प्रस्तुत करे, जो छह महीने की अवधि के लिए प्रभावी रहेगा, इस आशय के साथ कि यदि निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत याचिका दायर की जाती है या अनुमति प्रदान करने हेतु याचिका दायर की जाती है, तो अपीलार्थी, उसकी सूचना प्राप्त होने पर, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष उपस्थित होगा।

विचारण न्यायालय का अभिलेख अविलम्ब वापस भेजा जाए।

(मनोज कुमार गर्ग),जे

1-एमएस/

अस्वीकरण**:** इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है **,** एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का

अंग्रेज़ी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।



अधिवक्ता अविनाश चौधरी